शोधामृत
(कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की अर्धवार्षिक, सहकर्मी समीक्षित, मूल्यांकित शोध पत्रिका)

ISSN : 3048-9296 (Online)
3049-2890 (Print)
IIFS Impact Factor-2.0
Vol.-2; issue-2 (July-Dec.) 2025
Page No- 76-80

©2025 Shodhaamrit
https://shodhaamrit.gyanvividha.com

डॉ. विट्ठल शंकर नाईक
अध्यक्ष एवं सहयोगी प्राध्यापक,
हिंदी विभाग,
श्रीमती आक्काताई रामगोंडा पाटिल कन्या महाविद्यालय, इचलकरंजी.

Corresponding Author :
डॉ. विट्ठल शंकर नाईक
अध्यक्ष एवं सहयोगी प्राध्यापक,
हिंदी विभाग,
श्रीमती आक्काताई रामगोंडा पाटिल कन्या महाविद्यालय, इचलकरंजी.

'गिलिगडु' उपन्यास में वृद्ध विमर्श

प्रस्तावना : "मूल्य कभी स्थाई नहीं रहता। मूल्य परिवर्तित होते रहते हैं। मूल्य जब सकारात्मक हो तो परिवर्तन बिलकुल सही है। लेकिन जब मूल्य पूरे समाज के लिए या समाज के किसी वर्ग के लिए नकारात्मकता फैलाए तो वह उस समय के समाज के विकास में बाधा बनता है।"[1] भारत में सांस्कृतिक मूल्यों का पतन तीव्र गति से हो रहा है। यह, वह देश है जहां रोज़ वृद्धों का अभिवादन उनके पैर छूकर किया जाता था। लेकिन आज नई संस्कृति के पनपने से वृद्धों को परिवार और समाज के किनारे कर दिया गया।

व्यक्ति से परिवार और परिवार से समाज बनता है, और इस परिवार को संरचनात्मक रुप प्रदान करने वाला व्यक्ति घर के बड़े बुजुर्ग ही हुआ करते हैं जिससे परिवार की उत्पत्ति हुई है। परिवार के बिना समाज की निरंतरता संभव नहीं है। वास्तव में परिवार का आधार सुनिश्चित यौन संबंध है जो कि संतान उत्पन्न करनें से लेकर उनके पालन-पोषण तक अवस्थित रहता है। भारतीय संस्कृति में सम्बन्धों का बड़ा महत्व रहा है यह संस्कृति धर्म एवं अध्यात्म परक होने के साथ-साथ हमें संस्कारित भी करती है। परिवार इसी संस्कृति और संस्कारों का निर्वाह करते है। भारतीय संस्कृति सामूहिकता की संस्कृति रही है। त्याग, प्रेम, सदाचार आदि इसके विधायक तत्व रहे हैं। जिन्हें भारतीय मनुष्य अपने जीवन में पूरी तन्मयता के साथ निभाता रहा है। परिवार में बच्चे-आनंद, स्त्रियाँ - प्रेम और वृद्ध - शांति की अनुभूति कराते थे। निरंतर आधुनिक होते जा रहे समाज में उपर्युक्त मूल्य गौण हो गए और सुख, सुविधाएं, अर्थ, भौतिकता आदि प्रमुख हो गए है। ऐसे में सम्बन्धों के लिए जगह नहीं बची। हमने सम्बन्धों का निर्वाह तब तक किया जब तक संबंध हमारे लिए लाभदायक थे। अनुपयोगी होने के बाद हमने उन्हें ढोना जरूरी नहीं समझा। विडम्बना यह है कि जिस नींव की वजह से परिवार की संकल्पना की जाती है, उसी से आज का युवा वर्ग नफ़रत करने लगा है। उनसे बात करने से कतराते हैं। यहाँ तक कि उन्हें अपना बोझ समझ कर या तो अपने से हमेसा के लिए अलग कर देते हैं या

स्वयं ही बेगाना बनाकर अकेला छोड़कर निकल पड़ते हैं। जिसके परिणामस्वरुप इन वृद्ध माता-पिता बद्दतर जीवन जीने को मजबूर हो जाते हैं। अबतक एक दर्जन से जादा उपन्यासों में वृद्ध पीढ़ी की बद्दतर दशा का अंकन किया है। आधुनिकीकरण और व्यक्तिवादिता ने सामाजिकता, रिश्ते-नाते और संस्कारों को मूल्यहीन बना दिया है।

हिंदी उपन्यासों में वृद्धों का अंकन : "हिंदी उपन्यासों में वृद्ध विमर्श एक महत्वपूर्ण विषय है जो समाज में वृद्धों की बदलती भूमिका, उनकी समस्याओं, और उनके प्रति दृष्टिकोण को उजागर करता है। यह विमर्श न केवल वृद्धों की पीड़ा को दर्शाता है, बल्कि उनके अनुभवों, ज्ञान और सामाजिक योगदान को भी महत्व देता है।"[2]

वृद्ध जीवन पर आधारित निम्नाकित उपन्यासों ने वर्तमान पीढ़ी को चिंतन हेतु मजबूर कर दीया है ... मस्तराम कपूर– 'विषय पुरुष', (1997), पंकज बिष्ट– 'उस चिड़िया का नाम' (2005), काशीनाथ सिंह– 'रेहन पर रघु' (2006), चित्रा मुद्गल– 'गिलिगडु' (2007), निर्मल वर्मा– 'अंतिम अरण्य' (2011), हुद्येश– 'चार दरवेश' (2011), अज्ञेय- 'अपने-अपने अजनबी' (2005), कृष्णा सोबती –' समय सरगम' (2012), ममता कालिया – 'दौड़' ,रविंद्र वर्मा – 'पत्थर ऊपर पानी', डॉ.सूरज सिंह नेगी– 'रिश्तों की आंच', (2016), 'वसीयत'(2018), 'नियति चक्र' (2019) आदि।

सन 2002 में प्रकाशित चित्रा मुद्गल जी का उपन्यास 'गिलिगडु' 144 पुष्ठोंवाला संवेदनशील,नाटकीय ढंग से प्रस्तुत रचना है। जिसमें दिल्ली के दो वृद्धों की दिल दहलानेवाली कथा है । 'गिलिगडु' शीर्षक मलयालम शब्द किलिकुलू (चिड़िया) का हिंदीकरण है।

'गिलिगडु' में वृद्ध विमर्श : 'गिलिगडु' उपन्यास चित्रा मुद्गल द्वारा लिखित वृद्ध विमर्श की दास्तान है। इस उपन्यास में उन्होंने वृद्धों की समस्याओं को बहुत ही मार्मिकता के साथ चित्रित किया है। लेखिका ने अपने उपन्यास में तेरह दिनों के वृद्धों के जीवन को केन्द्र में रखा है। जिसे उन्होंने गैर मौजूदगी का नाम दिया है। यह उपन्यास हमारे तथाकथित सभ्य जीवन की पोल खोलता है जो बुजुर्गों की समस्या की जड़ में है। सुखी परिवार उसे कहा जाता था जहाँ परिवार के बुजुर्गों को आदर, सम्मान एवं सुख देने के साथ-साथ उन्हें खुश रखना भी उनके संतानों का परम कर्तव्य था। लेकिन वर्तमान समय में इसका अभाव सर्वत्र अनुभव किया जा सकता है। डॉ. अर्चना मिश्रा का कथन है- "गिलिगडु उपन्यास में चित्रा जी ने वृद्धों की बेचारगी संवेदनशीलता और जीवन शैली को विस्तार दिया है। पुस्तक के फ्लैप पर लिखी इबारत भी इस उपन्यास की आधारभूमि की ओर संकेत किया गया है। 'गिलिगडु' चित्रा जी का आकार में छोटा परंतु संवेदनशीलता में कहीं गहरा उपन्यास है। इस उपन्यास में सेवानिवृत्त बुजुर्ग की एक रेखीय कहानी नहीं, जीवन के रंग बहुआयामी रूपों में उभर कर आये है।"[3]

उपन्यास में जो वृद्ध दिखाई देते हैं उसे ही या उनकी समस्याओं को ही चित्रा मुद्गल जी ने पाठक के सामने नहीं रखा अपितु उपन्यास के दो नायक बाबू जशवंत सिंह और कर्नल स्वामी के बहाने चित्रा मुद्गल जी ने देश के वृद्धों के प्रश्नों को उठाया है। उन कारणों की तलाश की है जो उनकी दयनीय दशा के कारण हैं। भूमंडलीकरण, पश्चिम सभ्यता का अंधानुकरण, टूटते परिवार, भौतिकता के प्रति बढ़ता प्रभाव और त्याग एवं प्रेम का अभाव जैसे कुछ कारण है जो मनुष्य को मनुष्यता की सीमा से बाहर कर देते है। इस प्रक्रिया में कमजोर लोग पिसते हैं जिनमें बाल, वृद्ध, स्त्री और दलित लोग प्रमुख हैं। अन्य वर्ग तो शारीरिक रूप से स्वस्थ होने के कारण विरोध भी करते हैं,किन्तु वृद्ध शारीरिक रूप से अक्षम होने के कारण विरोध में बोल भी नहीं पाते, और उसी परिस्थिति में जीने के लिए विवश हो जाते है।

अकेलापन : आज के परिवेश में यदि हम वृद्धों की समस्या को देखे तो ज्ञात होता है कि उनकी समस्याओं के लिए जिम्मेदार उनके अपने परिवार वाले

ही होते हैं। परिवार द्वारा मिलनेवाला दुख, उनके द्वारा की जाने वाली उपेक्षा, एकांकीपन और उनकी अपनी शारीरीक दुर्बलता के चलते वृद्ध धीरे-धीरे हाशिये पर चला जाता है। आधुनिक शैली ने आज के मनुष्य को स्वार्थ केन्द्रित बनाया है जहाँ उसे अब किसी की जरूरत नहीं रहीं। भूमंडलीकरण ने मूल्यों की दीवार में सेत लगाई है। फलतः मूल्य खंडित हुये है। आज सम्बन्धों का निर्वाह करने के लिए युवा पीढ़ी तैयार नहीं है। उनकी आधुनिक जीवन शैली में अथवा फेशन परिस्थिति में जिस ओर से बाधा उत्पन्न होती है उसे वे बड़ी बेदर्दी के साथ निकाल बाहर करते हैं। चाहे वह उसका पिता ही क्यूँ न हो। "वृद्धों के बीच अकेलापन एक गंभीर सार्वजनिक स्वास्थ्य चिंता का विषय है। पीड़ा के संभावित स्रोत को कम करने के अलावा, अकेले वृद्धों के लिए हस्तक्षेपों की पहचान और लक्ष्यीकरण से डॉक्टरों के पास जाने और स्वास्थ्य देखभाल की लागत में उल्लेखनीय कमी आ सकती है।"[4]

गिलिगडु उपन्यास में चित्रा मुद्गल ने पात्रों के माध्यम से सामाजिक मूल्यों के क्षरण को बड़ी कुशलता के साथ रूपांतरित करती है। तेरह दिनों की मित्रता में जशवंत सिंह और कर्नल स्वामी की जो स्थिति प्रकट होती है वह वस्तुतः मूल्यों के क्षरण का परिणाम है। संयुक्त परिवार भारतीय संस्कृति का प्रमुख वैशिष्ट रहा है जहाँ सम्बन्धों को महत्व दिया जाता था। किन्तु आज न तो संबंध की जरूरत रही न ही मूल्यों की। इस उपन्यास में चित्रा जी ने यह भी दिखाने की कोशिश की है कि जड़ों से कटने पर व्यक्ति का जड़ों के प्रति कितना लगाव होता है। जशवंत सिंह कानपुर से सबकुछ छोड़कर बेटे नरेंद्र के पास दिल्ली आते है किन्तु अपनापन कहीं न कहीं कानपुर में ही छूट जाता है। बेटे और बहू के साथ वे अपनेपन को महसूस नहीं कर पाते। कदम-कदम पर वे स्वयं को अपमानित महसूस करते है। बेटा और बेटी दोनों ही जशवंत सिंह की जमीन, जायदाद, बैंक बलान्स को लेकर लालायित है।जशवंत सिंह की बेटी उनसे कहती है,"लॉकर में अभी है तो बहुत कुछ बाबूजी! अम्मा के अपने कई सेट ,पाच तोले के आजीवाली नाथ, चांदी का ढेरों सामान। अम्मा हमेशा कहती रही- अपनी पचलड़ और कुन्दन का सेट वे अन्चीता को देंगी और विक्रम की बहू के लिए....'।"[5] अपनी बेटी से यह बाते सुनकर गहरा आघात पहुँचता है और उनके हाथों से फोन का रिसीवर छूट जाता है।

वह अपने एकांत को दूर करने कानपुर से दिल्ली आए थे ताकि वे अपने बेटे, बहू और पोतों के साथ खुश रह सके। लेकिन उनका एकांत दूर नहीं होता। जशवंत सिंह की बहू नी भी अपने बच्चों को आत्मकेंद्रित बना दिया है, "बुद्धि विकास आड़ में बड़ी खूबसूरती से बच्चों को संवेदनाच्युत किया जा रहा इतना कि बच्चे कभी परिवार में न लौट सके, न कभी अपना कोई परिवार गढ़ सकें।"[6]

असह्य पीड़ा / अपमान : यह कहानी केवल दो वृद्धों की कहानी नहीं है बल्कि व्यापक स्तर पर यह वैश्विक भी है। यह उपन्यास तेरह दिन की कहानी में प्रातः कालीन भ्रमण के दौरान मित्र बने दो बुजुर्गों के जीवन को ही प्रस्तुत नहीं करता बल्कि आज के जीवन मूल्यों को भी परिभाषित करता है कि किस प्रकार सूचना क्रांति के दौर में तथाकथित समझदार युवा पीढ़ि अपनी बुजुर्गों को सम्मान न देते हुये उन्हें अकेला जीने के लिए छोड़ देती है। इस युवा पीढ़ी का प्रतिनिधित्व जशवंत सिंह का बेटा नरेंद्र करता है। इस पीढ़ि को वृद्ध की संपत्ति तो चाहिए होती है किन्तु उसके सेवा के लिए उसके पास कोई जगह नहीं होती है। जशवंत सिंह को कानपुर से बेटे और बहू के द्वारा दिल्ली बुला दिया जाता है। वंहा पर वे कदम-कदम पर खुद को अपमानित महसूस करते है। बात-बात पर उन्हें टोका जाता है। रहने के लिए भी बालकनी को रूम में तब्दील किया जाता है जो कही न कहीं वृद्धों को हाशिये की ओर धकेलने का भी प्रतीक है। अपने बेटे की अपने प्रति उपेक्षा को देखकर ही जशवंत सिंह विवश होकर नरेंद्र से पूछते हैं, " तुम कभी बूढ़े नहीं

होगे नरेंद्र?"[7] इतना ही नहीं उन्हें वृद्धाश्रम 'आनंद निकेतन' में भेजने की योजना भी बनाई जाती है। अपनी स्थिति को देखकर वह सोचते भी है "इस घर में एक नहीं दो कुत्ते हैं एक टॉमी, दूसरा अवकाश प्राप्त सिविल इंजीनियर जसवंत सिंह! टॉमी की स्थिति निसंदेह उनकी बनिसबत मजबूत है।"[8] वृद्ध जसवंत सिंह अपने पोते के जन्मदिन पे पार्टी देना चाहते हैं और भावनात्मक तौर से बच्चे से जुड़ने की कोशिश करते हैं । परन्तु मलय (पुत्र) द्वारा दिया गया अपने पिता को करारा जवाब उसके दिल को ठेस पहुँचाता है, " उसका यह कार्यक्रम उसके दोस्तों के साथ है ।घर वाले इसमें शामिल नहीं होंगे । मम्मी को वैसे भी जन्मदिन मनाने में झंझट होता है....न, न दादू । हम अपने से बड़े किसी को भी नहीं ले जायेंगे वरना पार्टी बोरिंग हो जाएगी । " वृद्ध जीवन की एकमात्र यही आश होती है कि वृद्धावस्था में उसके अपने उसके साथ हो परन्तु वही अपने अपनी नई पीढ़ी के आगे उन्हें वृद्धा जान कर अपने किसी भी कार्य में शामिल करने से हिचकिचाते हैं जिसके चलते आज समस्त वृद्धजनों को प्रवास में रहकर अकेलापन का शिकार होना पड़ता है।

निपूता में सुख मानने के लिए मजबूर : जबकि दूसरे वृद्ध कर्नल स्वामी की स्थिति और भी भयावह है जिसे चित्रा मुद्गलजी ने बड़ी कुशलता के साथ उपन्यास के अंत में प्रकट किया है।कर्नल स्वामी एक ऐसा व्यक्तित्व है जो परिवार द्वारा अकेले रहने के लिए विवश कर दिया है। लेकिन वह अकेलेपन में प्रसन्न रहने की कोशिश करता है। जशवंत सिंह से मिलने के बाद वह उनके समक्ष स्वयं को बहुत सुखी और आनंदित प्रस्तुत करता है। जबकि असल स्थितियाँ कुछ और ही होती है। उनका परिवार बेटे-बहू अलग रहते है, और वे अकेले कई दिनों तक प्रातःकालीन भ्रमण पर न आने के बाद जशवंत सिंह उनके घर पहुँचते हैं तब जिन स्थितियों से उनका सामना होता है जिससे उनके पैरो तले की जमीन खिसक जाती है। कर्नल स्वामी की पड़ोसी मिसेज श्रीवास्तव जशवंत सिंह को कर्नल की स्थिति से अवगत कराती है और कहती है- ऐसी कसाई औलादों से आदमी निपूता भला। हमें इस बात का कोई गम नहीं कि हमारी कोई अपनी औलाद नहीं...."[9] कर्नल स्वामी अपने घर में अकेले ही रह रहे थे किन्तु अब उनकी मृत्यु हो चुकी थी। बाबू जशवंत सिंह को जिस बहू बेटों और पोतियों की बात बताते थे वह सब काल्पनिक था। जशवंत सिंह उपहार के रूप में जो कुछ लेके गए थे वह पड़ोसी को देकर लौट आते है। चित्रा मुद्गल इस कहानी को बड़ी संजीदगी के साथ पेश करती है। रचना इस विश्वास को और भी गहरा करती है कि साहित्यिक मूल्यों में सामाजिक सार्थकता का महत्व निरंतर बना रहेगा।

मोह भंग : गिलिगडु उपन्यास में चित्रा मुद्गल ने पात्रों के माध्यम से सामाजिक मूल्यों के क्षरण को बड़ी कुशलता के साथ रुपांतरित करती है। तेरह दिनों की मित्रता में जशवंत सिंह और कर्नल स्वामी की जो स्थिति प्रकट होती है वह वस्तुतः मूल्यों के क्षरण का परिणाम है। संयुक्त परिवार भारतीय संस्कृति का प्रमुख वैशिष्ट रहा है जहाँ सम्बन्धों को महत्व दिया जाता था। किन्तु आज न तो संबंध की जरूरत रही न ही मूल्यों की। इस उपन्यास में चित्रा जी ने यह भी दिखाने की कोशिश की है कि जड़ों से कटने पर व्यक्ति का जड़ों के प्रति कितना लगाव होता है। जशवंत सिंह कानपुर से सबकुछ छोड़कर बेटे नरेंद्र के पास दिल्ली आते है किन्तु अपनापन कहीं न कहीं कानपुर में ही छूट जाता है। बेटे और बहू के साथ वे अपनेपन को महसूस नहीं कर पाते। कदम-कदम पर वे स्वयं को अपमानित महसूस करते है। बेटा और बेटी दोनों ही जशवंत सिंह की जमीन, जायदाद, बैंक बलान्स को लेकर लालायित है।जशवंत सिंह की बेटी उनसे कहती है,"लॉकर में अभी है तो बहुत कुछ बाबूजी! अम्मा के अपने कई सेट ,पाच तोले के आजीवाली नाथ, चांदी का ढेरों सामान। अम्मा हमेशा कहती रही- अपनी पचलड़ और कुन्दन का सेट वे अन्चीता को देंगी और विक्रम की बहू के

लिए....'।"[10] अपनी बेटी से यह बाते सुनकर गहरा आघात पहुँचता है और उनके हाथों से फोन का रिसीवर छूट जाता है। वह अपने एकांत को दूर करने कानपुर से दिल्ली आए थे ताकि वे अपने बेटे, बहू और पोतों के साथ खुश रह सके। लेकिन उनका एकांत दूर नहीं होता। जशवंत सिंह की बहू नी भी अपने बच्चों को आत्मकेंद्रित बना दिया है, "बुद्धि विकास आड़ में बड़ी खूबसूरती से बच्चों को संवेदनाच्युत किया जा रहा इतना कि बच्चे कभी परिवार में न लौट सके, न कभी अपना कोई परिवार गढ़ सकें।"[11]

जशवंत सिंह जब कर्नल स्वामी कि स्थिति से रूबरु होते है तब परिवार के प्रति उनका रहा सहा मोह भी भंग हो जाता है। यही कारण है कि उनका प्रेम बेटा बहू और बेटी कि अपेक्षा कानपुर के घर में रहने वाली नौकरनी सुनगुनियाँ और उसके बच्चों के प्रति अधिक उमड़ता है। इतना ही नहीं अपने शव को मुखाग्नि देने की ज़िम्मेदारी भी उसे ही सौंपते है। वस्तुतः इस उपन्यास में मूल्यों के टूटन से उपजी भयावहता का बेबाग चित्रण किया है। जहाँ न आपसी प्रेम है और न ही लगाव है।

निष्कर्ष : आज मनुष्यता धीरे-धीरे कम होती जा रही है। उपभोक्तावाद, भूमंडलीकरण के चलते मनुष्य सिर्फ अपनी तरक्की, सुख-सुविधा से भरा जीवन व्यतीत करना चाहता है, पाश्चात्य जीवन प्रणाली और एकल परिवार को ही सब कुछ मान बैठा हैं लेकिन इसी होड के चलते वह अपनों को ही भूल जाता है, सच्चाई यह है कि हम जिन बुजुर्गों ने हमें अपनी उंगली पकड़ कर हमारी नन्ही सी हाथों को थामकर हमें चलाना सिखाया उन्ही को आज दुत्कार और नकार रहे हैं। यहाँ तक कि उनके बुढ़ापे में लाठी बनने की अपेक्षा हम उन्हें बोझ समझने लगे हैं। इसका उत्तम उदाहरण हमे इस उपन्यास में नरेंद्र के माध्यम देखने को मिलता है। आज देश में वृद्धाश्रम कुकुरमुत्ते की भाँति बढ़ रहे हैं। आज की युवा पीढ़ी के लिए अपने ही माता- पिता को संभालना उनके लिए बोझ के समान हो गया हैं। चित्रा जी ने इसे अपने उपन्यास में बखूबी दर्शाया है और युवा पीढ़ी को वर्तमान स्थिति से साक्षात्कार कराना भी उनका उद्देश्य रहा है।

संदर्भ सूची :

1. 'मूल्य क्षरण के दौर में हाशिए पर वृद्ध' :- राहितापी.आर.:- संगम शोध पत्रिका, मई 2023.
2. 'हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श' : डॉ.दिलीप मेहरा : उत्कर्ष पब्लिशर्स कानपूर पृ. 94.
3. 'चित्रा मुदगल के कथा साहित्य में युग चिंतन' :- डॉ० अर्चना मिश्रा, पृ.-36.
4. 'सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या के रूप में अकेलापन' : केर्स्टिन गेर्स्ट-एमर्सन : 'अमेरिकन जर्नल ऑफ पब्लिक हेल्थ' (AJPH), मई 2015.
5. 'गिलिगडु' :- चित्रा मुदगल :- सामयिक प्रकाशन, 2007, पृ.- 95.
6. 'गिलिगडु' :- चित्रा मुदगल :- सामयिक प्रकाशन, 2007, पृ.- 34.
7. 'गिलिगडु' :- चित्रा मुदगल :- सामयिक प्रकाशन, 2007, पृ.- 80.
8. 'गिलिगडु' :- चित्रा मुदगल, :- सामयिक प्रकाशन, 2007, पृ.- 96.
9. 'गिलिगडु' :- चित्रा मुदगल :- सामयिक प्रकाशन, 2007, पृ.- 138.
10. 'गिलिगडु' :- चित्रा मुदगल :- सामयिक प्रकाशन, 2007, पृ.- 95.
11. 'गिलिगडु' :- चित्रा मुदगल :- सामयिक प्रकाशन, 2007, पृ.-34.

•